International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157
Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 378-379

कबीर के काव्य में प्रेम–दर्शन का स्वरूप

ममता रानी
शोधकर्त्ता, कलिंगा विश्वविद्यालय, नया रायपुर, छत्तीसगढ़, भारत।

सारांश
कबीर के काव्रू की अर्न्तचेतना प्रेम–तत्व में ही निहित है। प्रेम–तत्व के जीवन के लोकिन और आध्यात्मिक सन्दर्भे में विविध आयाम देते हुए काव्य भी भाषा में अभिव्यक्त करना इन महान कवियाँ का लक्ष्य रहा है। हमारा मानना है कि कबीर की कविता के सभी पक्ष्ज्ञ किसी न किसी रूप में परीक्ष्ज्ञ रूप से जीवन में प्रेम–तत्व की ही प्रतिष्ठा करते हैं।

मूल शब्दः प्रेम–दर्शन, अर्न्तचेतना, परीक्ष्ज्ञ रूप

प्रस्तावना
कबीर की कविता प्रत्यक्ष रूप से प्रेम को आधार बनाकर चलती है। मादक भाव में डुबी मीरा कका नारा जीवन जब वैधव्य से अभिशपित हुआ है तो विवाद निरशा कविता में प्रेम की एकातिक साधना नहीं करते। उनकी कविता सामाजिक आधारभूमि ग्रहण करती हुई अपनी अनूभूतियों को अभिव्यक्ति देती है। कबीर के काव्य से यह स्पष्ट है कबीर का मन सामाजिक विसगगतियों, विषमताओं, विखराव आदि में एक असहनी पीड़ा अनुभव कर रहे हैं। इस अभाव की पूर्ति के लिये कबीर विभिन्न सामाजिक सन्दर्भ में एक ढाँचा प्रस्तुत करते है, जो समसामयिक समाज के विकृत स्वरूप को सूधारने के लिये प्रेम–तत्व की अपरिहार्यता बता रहा था। कबीर का काव्य कबीर के इसी प्रेम तत्वपरक दृष्टि और उसकी वैचारिकता पर टिा हुआ है। रागतत्व उनके काव्य की धमनियाँ में संचारित है जो स्पष्ट रूप से दिखाई न देते हुए भी उनके काव्य को जीवन चेतना दे रहा हैं।

साहित्य की समीक्षा
"सच पूछा जाए तो कबीरदास योगमार्ग की क्लिष्ट साधनाओं को भी बाह्याचार समझते रहे। उनके जैसा उन्मुक्त विचार का मनुष्य किसी प्रकार की रुढियों का कायल नहीं हो सकता था। बारम्बार वे जिस सहज समाधि की घोषणा कर गए हैं उसमे नाना प्रकार के प्राणायाम, आसन, समाधि और मुद्राएँ परम तत्व की उपलब्धि के साधन हैं, साध्य नहीं। डॉ. रामकुमार वर्मा, पारसनाथ तिवारी, गोविन्द त्रिगुणायत, रामचंद्र शुक्ल जैसे अनेक विद्वान ने रहस्यवादी कहने के लिए निम्नलिखित विशेषताओं का होना आवश्यक माना है–

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी उन विरल रचनाकारों में हैं जिनकी कृतियाँ उनके जीवनदृकाल में ही क्लासिक बन जाती हैं। अपनी जन्मजात प्रतिभा के साथ उन्होंने शास्त्रों का अनुशीलन और जीवन को सम्पूर्ण भाव से जीने की साधना करके वह पारदर्शी दृष्टि प्राप्त की थी, जो किसी कथा को आर्षदृवाणी की प्रतिष्ठा देने में समर्थ होती है। जिस मनीषी ने हजारों साल से कायरता का पाठ दोहराती हुई जाति को ललकारकर कहा थाः ''सत्य के लिए किसी से भी न डरना, गुरु से भी नहीं, मंत्र से भी नहीं, लोक से भी नहीं, वेद से भी नहीं।'' वह कोई सामान्य कथाकार नहीं है। ऐसा उद्घोष कोई आर्षवक्ता ही कर सकता है। ग्रन्थावली के इस पहले खंड में द्विवेदीजी के दो उपन्यास बाणभट्ट की आत्मकथा और चारु चन्द्रलेख प्रस्तुत हैं। बाणभट्ट की आत्मकथा का कथानायक कोरा भावुक कवि नहीं, वरन् कर्मनिरत और संघर्षशील जीवनदृयोद्धा है। उसके लिए 'शरीर केवल भार नहीं, मिट्टी का ढेला नहीं', बल्कि उससे बड़ा है और उसके मन में 'आर्यावर्त के उद्धार का निमित्त बनने' की तीव्र बेचौनी है। चारु चन्द्रलेख में बारहवींदृतेरहवीं शताब्दी के उस काल का सर्जनात्मक पुनर्निर्माण करने का प्रयत्न है, जब सारा देश आन्तरिक कलह से जर्जर और तांत्रिक साधना के मोह में पथभ्रष्ट होकर समस्याओं का समाधान पारे और अभ्रक के खरलदृसंयोगों में खोज रहा था। द्विवेदीजी ने इसके विरुद्ध ज्ञान, इच्छा एवं क्रिया के त्रिकोणात्मक सामंजस्य तथा जनसाधारण की हिस्सेदारी पर बल दिया है, और उनकी इस स्थापना में अनायास ही आधुनिक युग मुखर हो उठता है।

महान भाषाविद् तथा मूर्द्धन्य साहित्यकार डॉ. श्यामसुन्दर दास का जन्म सन् 1875 ई. में काशी (वाराणसी) में हुआ था। एक प्रतिभाशाली विद्यार्थी के रूप में सन् 1897 ई. में बी. ए. पास करने के उपरान्त उन्होंने कुछ समय तक काशी के हिंदू स्कूल में अध्यापन का काम किया तथा बाद में लखनऊ के कालीचरण स्कूल में बहुत दिनों तक प्रधानाध्यापक के पद पर कार्यरत रहे। आगे चलकर वे सन् 1921 ई. में काशी हिंदू विश्वविद्यालय के अध्यक्ष पद पर प्रतिष्ठित हुए। उन्होंने सन् 1893 ई. में अपने कुछ साहित्य प्रेमी सहयोगियों से मिलकर 'नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना की। 'हिंदी शब्द सागर' का संपादन, 'आर्य भाषा पुस्तकालय' की स्थापना, प्राचीन महत्वपूर्ण ग्रंथों का संपादन, सभा–भवन का निर्माण, 'सरस्वती' पत्रिका संपादन, उच्चस्तरीय शिक्षा–पुस्तकों का लेखन–प्रकाशन जैसे भाषाई रचनात्मक कार्य उनके हिंदी–उन्नयन एवं सर्वतोमुखी विकास में किए गए ऐतिहासिक कार्य थे। वस्तुतः जीवनपर्यंत वे हिंदी साहित्य एवं हिंदी भाषा के उन्नयन एवं विकास में पूरे समर्पण भाव से लगे रहे। मौलिक कृतियाँरू नागरी वर्णमाला, साहित्यालोचन, भाषाविज्ञान, हिंदी भाषा का विकास, हिंदी कोविद ग्रंथमाला, गद्यकुसुमावली, भारतेंदु हरिश्चंद्र, हिंदी भाषा और साहित्य, गोस्वामी तुलसीदास, भाषा रहस्य, मेरी आत्मकहानी। संपादित कृतियाँरू चंद्रावली, छत्रा प्रकाश, रामचरितमानस, पृथ्वीराज रासो, हिंदी वैज्ञानिक कोश, हम्मी रासो, शकुंतला नाटक, रत्नाकर, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, सरस्वती।

कबीर के प्रेम–दर्शन की पृष्ठभूमि

कबीर का प्रेम–दर्शन एक ही परिस्थितियों का परिणाम नहीं है। रागतत्व मनुष्य की मानसिक सरंचना का एक शाघत तत्व है। बाजी के रूप में यह तत्व हर पुरूष ओर हर खी में जन्म के साथ ही उत्पन्न होता है। प्रेम–तत्व का विकास प्रकृति और परिस्थितियों के अनुरूप अपने–अपने ढंग से होता है। कबीर के जीवन में विचार कर चुके है। यहाँ कवियों के काव्य में अतर्भावी प्रेम–दर्शन के आध्ययन के लिये राग–तत्व के विकास की परिस्थितियों पर विचार करेंगे।

कबीर के व्यक्तित्त्व जीवन की परिस्थितिया पारम्भ से अतं तक नकारत्मक और अभावनात्मक रही। समाज के हर सम्बन्ध और हर वर्ग से उन्हें उपेक्षा और घृणा का वातवरण मिला। माता–पिता सम्बन्धी संदर्भ पत्नी और पुत्र के स्वभाव विरोधी रिस्थितिया, समाज की ऊँच–नीच का भावनाजन्य दृष्टि कबीर को एक प्रदुद्ध विचारक बना देती है। उनका विचारक मानव, की वैयक्तिक पीड़ाओं तथा सामाजिक जीवन को तात्विक दृष्टि से विश्रेषित करते हुए देखता है उनकी संरचना में प्रेम का अभाव अनुभव करते हुए उसका संचार करना चाहता है।

प्रेम के इस संचार के लिये कबीर की दृष्टि भावुक्त न होकर वैचारिक अधिक है। यह वैचारिक ही उनके प्रेम–दर्शन का ढॉचा तैयार करती है। इस प्रकार कबीर कि परिस्थतियां ही कबीर के प्रेम–दर्शन को आधारभूमि देती हैं। कबीर की अपनी अलग–अलग वैयक्तिव और सामाजिक परिस्थियां है। जैसे कि हम पूर्व अध्यायों में विस्तार से विचार कर चुके है परिस्थितयों के आधार पर कबीर के प्रेम–दर्शन की देशाएं निधीरण करने के बाद हम कबीर के प्रेम के स्वरूप से विचार करेंगे।

उपसंहार

सामान्य रूप से देखने पर कबीर के काव्य में अव्यक्त प्रेम–तत्व भक्ति साधाना का विषय बनकर आता है। भक्ति के क्षेत्र मधुरा भक्ति और वात्सल्य भक्ति के आधार पर ही प्रेम–तत्व का विशेषण किया जाता है। भक्ति साधना का निर्वाह भक्ति के आलम्बन के रूप के आधार पर ही होता है। कबीर के काव्य में भी मधुर भक्ति और वात्सन्य की कुछ झांकियाँ दिखाई देती हैं। कबीर की भक्ति साधना और भक्ति के आलम्बन के स्वरूप के आधार पर इन की विभूतियों का प्रेम–अलग–अलग स्वरूप ग्रहण करता हैं।

कबीर ज्ञान को आधार बनाकर अपने आलम्बन के स्वरूप का निर्माण करता हैं। कबीर के प्रेम का यह आलम्बन कण–कण में व्यास 'रमैया' के रूप में है। यही करण है कि रमैया की व्यापकता के साथ कबीर का प्रेम भी सर्वव्यप्न बन जाता है। कबीर जिस आंलचन को अपने प्रेम का विषय बनाते है उनका स्वरूप कबीर का इन पंक्तियों में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है

ए सकल ब्रह्माण्ड तै पुरिया, अरू दूजा महि न्याय जी,
राम रसाइन रसिक है, अदभुत गति विस्तार जी।
सिव सनकादिक नारद, ब्रह्मा लिया निज वास जी,
कहै कबीर पद पंकयजा, अब नेड़ा चरण निवास जी।

उपर्युक्त पंक्यिों में स्पष्ट व्यंजना की गयी है कि भक्ति का आधार प्रेम है। प्रेम ज्ञान और भावना के समन्वय से अपनी जीवन चेतना ग्रहण करता है।

आधात्मिक संदर्भ में कबीर का यह प्रेम परमात्मतत्व और आत्मतत्व में अद्वैतपरक अनुशीलन के साथ अलौकिक स्वरूप ग्रहण करता है, वही लोकिक क्षेत्र में सर्वात्य भाव के आधार पर व्यावारिक प्रेम कि प्रतिष्ठा करता हैं।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर आश्वाश्ता के साथ पहुँचते है कि कबीर के प्रेम–दर्शन की अपनी अलग–अलग दिशाएं हैं। इन दोनों के प्रेम–दर्शन पर विचार करने के लिए इनमें निहित साम्य और वैषम्य पर गंभीरता से विचार करना होगा।

जैसा की हम जानते है कि कबीर के काव्य की चेतना भक्ति से सम्बन्ध है भक्ति ही साध्य है और भक्ति साधना है। भक्ति साधना की प्रक्रियाा है सामान्य रूप से देखने पर दिखाई देती हैं। कबीर के प्रेम–दर्शन में समय लक्ष्य और साधना के रूप में वैचारिक और भावनात्मक आधार पर्यास दिखाई देता है। जबकि मूलतयः इन में कोई तात्वि अंतर नहीं है। भक्ति का वैचारिक आधार ही इनके काव्य प्रेम–दर्शन है।

संदर्भ

1. कबीर के काव्य रूप डॉ0 नजीर मुहम्मद
2. कबीर–ग्रथवली, साखी नाग
3. कबीर–ग्रथवली, साखी 1/2 श्याम सुन्दर दास।
4. कबीर–ग्रंथवाली साखी 1/33 श्याम सुन्दर वाले।
5. कबीर–ग्रथवाली साखी 1/34 श्याम सुन्दर दास।
6. कबीर–ग्रंथवाली–श्याम सुन्दरदास सबंध